भूमिका:

एक और क्रांति—दर्शन

अद्वैतवादी है तंत्र—दर्शन—आकाश और धरती दोनों को एक साथ स्वीकार करता है वह!. और यहीं से शुरू होता है एक जागरूक आंदोलन, विद्युत —किरणों का ऐसा प्रस्फुटन जो भारत के भक्तों, प्रेमियों, बौद्धिकों के दिलों को ही नहीं बल्कि विश्व भर के ग्राह्य—हृदयों को भी तरंगायित, आलोड़ित कर गया। ओशो ने समग्र भगवत्ता को जगत में उड़ेलते हुए उपलब्ध होने के सभी मार्गों को खोला। हिंदू जैन, बौद्ध, यहूदी, हसीद, ईसाई आदि सभी की धर्म —विधियों की व्याख्या द्वारा। और योग, तंत्र के सूत्रों, सतवाणियो को फिर से उजागर कर के नए मनुष्य को अपना मार्ग अपनाने के लिए एक ऐसी हिम्मत दे दी जो द्वंद्ववादी युग में कहीं खो रही थी— आत्मविहीनता के बौनेपन में जिसकी ऊंचाई ढूंढे न मिल रही थी दिशाहीन मनुष्य को।

ऐसे में महा—महानगर बंबई के सब से गतिमय महत्वपूर्ण फ्लाईओवर को अपनी ऊंचाई की छाव देती, तेज जिंदगी की सड़क के किनारे सटी, एक शांत—सी इमारत में प्राचीन—ग्रंथ विज्ञान भैरव—तंत्र के सूत्र गज उठे तो जैसे आधुनिक पीढ़ी के हाथ कोई ऐसा खजाना आ गया जो कभी प्राचीन सभ्यताओं की रहस्यवादी खुदाई की भटकन के दौरान अनायास ही मिल जाता है।

"तंत्र के लिए संसार ही दिव्य है, भगवत्ता है "यह भगवत्—वाणी अपनी अनुगूंज भरने लगी 1972 की खोखली परिवर्तनशीलता में। तो यह बात एकदम समा गयी उन भौतिकवादियो के दिलों में जो कभी हिप्पीवाद, संत्रासवाद तो कभी दिशाहीनता या फिर 'स्कीजोफ्रेनिया' के दायरों में पड़े भटक रहे थे। उन्हें भी आकर्षित किया सद्गुरु ओशो की भैरव—तंत्रीय देशनाओ ने जो केवल 'पदार्थ' द्वारा ही सब कुछ जानने —समझने के आदी हो चले थे। ऐसे में 'अपदार्थ' को 'पदार्थ' द्वारा जानने का ' धर्म' मिलने लगा तो कौन न अपनाता उसे!

कहते हैं हर पाच हजार वर्ष के बाद कोई महत् —घटना घटित होती है इस सृष्टि में। जिसे पांच हजार वर्ष पूर्व धर्मों, संप्रदायों, मतों से मुक्त स्वयं शिव ने रचा था वह विज्ञान भैरव—तंत्र भी अपने अभिनव रूप में इस सदी के आठवें दशक में प्रवाहित हो चला दसों दिशाओं में। बात तब भी जड़ धर्मों—ढांचों की जड़ता से बाहर होने की वैज्ञानिक ढंग की थी और आज भी वही निर्णायक मोड़ आ पहुंचा है पूरी मनुष्य—जाति के सामने जहां अपने को हर ढांचे—ढर्रे से अलग देखते हुए व्यक्ति को कहीं कुछ श्रेष्ठतर पा लेना है, छू लेना है अपनी चेतना का श्रेष्ठतम बिंदु।

"मनुष्य से श्रेष्ठतर प्राणी बनो "—तंत्र—दर्शन का एक सूत्र जब यह कहता है तो सोचने को मजबूर होना पड़ता है कि कितनी बाहरी समृद्धि पा ली मनुष्य ने लेकिन फिर—हां,फिर चेतना की बड़ी से बड़ी समृद्धि क्यों न उपलब्ध हो? पशुत्व और देवत्व के बीच के पड़ाव में ठहरा मनुष्य श्रेष्ठतर चेतना के आयामों की तरफ भी बढ़े। यानी भैरव—तंत्र भी अपने ढंग के शायराना अंदाज में कहता है— "आसान है आदमी का इन्सान होना।"

और लाखों दिलों में आग सुलग गयी थी, किसी अदृश्य परम—चेतना की लपटें छू रही थीं उन्हें! मुझे याद आ रहा है विश्व भर के मित्रों की जिज्ञासा का वह प्रारंभिक दौर जब पूना— आश्रम की सीमित व्यवस्था दुनिया के हर कोने से चले आए इतने सारे मित्रों को संभाले नहीं संभाल पा रही थी। 1972 से 1976 तक के चार वर्ष

और सारी दुनिया में ओशो के लिए एक बाबरी जिज्ञासा उमड़—उमड़ कर बह चली थी—एक अस्तित्व—लीला की लय के साथ थिरकते हजारों—लाखों मन—प्राण खिंचे चले आए परम—तीर्थ पूना की ओर।

और फिर एक दिन परिदृश्य बदला, परम करुणा की मौज बही और पश्चिम की तरफ भी बरस गयी— "जो लोग मुझ तक नहीं पहुंच सके, मुझे उन्हें भी देखना है " —पूरी मनुष्य—जाति को केवल प्रवचनों द्वारा नहीं बल्कि 'ध्यान—क्रियाओं' द्वारा भी परम धर्म देने वाले सद्‌गुरु ओशो 'भगवान श्री' से 'ओशो' शायद उसी दिन हो गए थे जब विश्व—कम्यून बनाने को, जागतिक—चेतना जगाने को उन्होंने पश्चिमी धरती पर भी परम चैतन्य के फूल खिला दिए थे। झकझोर दिया था पूरी मनुष्य जाति के सोए मन को।

उधर पूरे विश्व में एक जागृत—लहर दौड़ चली थी, इधर भारत में उनके प्रेमी भक्त तड़प रहे थे। हर दिन 'दर्शन' पाने वालों को कितना विकट विरह जला रहा था, लेकिन यही वह बडा अवसर भी था जब इसी 'शरीर' में 'अशरीर' का अनुभव होना था। गुरु के 'अमूर्त' रूप से तार जुड़ना था। लेकिन इसी पूरी प्रक्रिया में बार—बार मरना था।'तभी उन्हीं गलियों में बार—बार भटकी थी, जहां उनकी दृष्टि कभी एक बार भी अटकी थी।'

इसी पावन भटकन का एक चरण थी बंबई की वही बहुमंजिली, कैंपस—कार्नर की इमारत 'वुडलैंड'—जहां विज्ञान भैरव—तंत्र के प्रवचन अब भी गज रहे थे। उसी के कंपाउंड का वह विशाल वट—वृक्ष। कभी जिसके तले बैठ दिनकर, पंत जैसे महान साहित्यकार भी युवा सद्‌गुरु ओशो की देशनाओं पर चिंतन किया करते थे—उसी वट—वृक्ष से पूछती, अब क्या? सब खाली हुआ अब! अपना कुछ भी न रहे तो? अपने सद्‌गुरु के पास भी नहीं पहुंच सकते? फिर यहां क्या है! —और फिर एक महाशून्य के बीच ध्वनित होने लगी. तंत्र—दर्शन की वही प्रवचन—माला जो इसी स्थान पर रची गयी थी, क्यों याद आ रही है वह! —क्या इसलिए कि भैरव—तंत्र के जनक शिव हैं? या कि यह आज के मानस के अनुकूल, है इसलिए? या कि यह शुद्ध विज्ञान है इसलिए? क्योंकि मुझे सद्‌गुरु ने 'योग' में गहरे से गहरे उतारा था. 'योग' भी वैज्ञानिक है और 'तंत्र—दर्शन' भी वैज्ञानिक, क्या इसलिए? पता नहीं जो भी था, लेकिन यह आज समझ में आता है कि 'तंत्र—सूत्र' में रुचि न होते हुए भी मैं उन दिनों क्यों उसमें रस लेने लगी! —क्योंकि यह भी एक ढंग था परम प्यारे गुरु को प्रत्येक ढंग से जीने का।

भैरव—तंत्र के सूत्रों में और— और प्रवेश करते जाते हैं तो पता चलता है कि विधियां भी सूक्ष्म से सूक्ष्मतर होती चली जाती हैं। उन दिनों घनघोर बारिश में खुले आकाश तले चलते चले जाना भी हृदयाग्नि को कहीं से भी कम नहीं होने देता था। ऐसे में वर्षा की अंधेरी रात्रि से जुड़ी यह तंत्र—विधि. "वर्षा की अंधेरी रात में उस अंधकार में प्रवेश करो जो रूपों का रूप है।"इसी विधि—सूत्र की व्याख्या करते हुए ओशो ने एक नया ही आकाश उद्घाटित किया, अंधकार के सौंदर्य को प्रकट किया।

—अंधकार असीम है, स्रोतहीन है। अंधकार के साथ 'एकमयता' होने से मृत्यु से निर्भय हो सकते हैं। कैसी अलग सी बात। तभी न विज्ञान भैरव तंत्र की 112 विधियों के लिए कहा गया है कि इन में से कुछ ऐसी हैं जिनके साधक पिछले युग में थे। और कुछ विधियां आगे आने वाले साधकों के लिए हैं। और 'एकमयता' जो आज के 'झेन' की विशेषता है 'तंत्र—दर्शन' में समायी हुई है।'वर्षा की रात के अंधकार' के साथ एकरूप होना हो या 'ग्रीष्म ऋतु के आकाश की अंतहीन निर्मलता' से एकात्म होना हो—बात 'एकमयता' द्वारा द्वैतों की समाप्ति की ही है।

एक और सूक्ष्म—सघन विधि की व्याख्या ओशो ने इस तंत्र—दर्शन की आठवीं प्रवचन—माला में बड़ी सामयिक वैज्ञानिकता से कही है— "आंखों की पुतलियों को पंख की भांति छूना। उनका हल्कापन हृदय में खुलता है और वहा ब्रह्मांड व्याप जाता है।"—आंख जो कि मुखौटारहित शुद्ध प्रकृति है, वह बंद हो तो ऊर्जा

बाहर न जाकर भीतर हृदय पर बरसती है और तब हृदय का ' अनाहत—चक्र' खुल—खिल जाता है और ऊर्जा के झरने में सारा 'मैं—पन' घुल कर बह जाता है। बचता है तो ब्रह्मांड या ब्रह्मंडमयता।

—और 'शरीर में ही पूरा ब्रह्मांड है'—इस योग—सूत्र के ही किसी बिंदु से जा मिलता है तंत्र—सूत्र। और यही वैज्ञानिक स्थापनाएं भी कहती हैं कि जो कुछ ब्रह्मांड में है वही संरचना शरीर में निहित है।. और आज के सद्‌गुरु ओशो की अध्यात्म—वाणी भी बार—बार जगाती है— "परमात्मा कहीं बाहर नहीं, पास से पास है।" तंत्र—दर्शन की ही देशनाओं के दौरान सद्‌गुरु ने 'आकाशीय स्थिति', 'गुह्य संप्रदायों का त्रिकोण', 'मन का जीवन' जैसी अध्यात्म—विज्ञान की बहुत सी विशिष्ट पारिभाषिक शब्दावलियों को एकदम सरल रूप में समझा दिया है।

लेकिन एक घटना यह भी घटी कि मनुष्य—मन का चालाक—तंत्र भी सामने आया।'अपदार्थ' को 'पदार्थ' द्वारा जानने का विज्ञान मिला तो चार्वाक—किस्म के व्यक्ति इस अति तक पहुंच गए कि 'जो कुछ है बस पदार्थ ही है।' इस तरह सद्‌गुरु की वाणी को तोड—मरोड कर अपने स्वार्थ में प्रयोग करने लगे और अन्य लोगों को भी यही कुछ सिखाने लगे। भारत की प्राचीन संपदा को विश्व में विस्तारित करने का कितना बड़ा मूल्य चुकाना पड़ा ओशो के क्रांति—दर्शन को।

जब कि तंत्र का मानना ही यही रहा है कि 'पदार्थ' और 'अपदार्थ' दोनों के सत्य को स्वीकारना है। फिर कैसे कहा जा सकता है कि जो कुछ है बस यही है जिसे कि हमारी स्थूल इंद्रियां ही देख समझ सकती हैं। बल्कि तंत्र तो इन दोनों के भी पार जाने का दर्शन है—तीसरे शिखर—बिंदु को छूने की बात कहता है। यानी ब्रह्मांड में व्याप्त विद्युत—ऊर्जा की बात! वस्तुत: भैरव—तंत्र साधारण ऊर्जा से विद्युत—ऊर्जा तक पहुंचने का विज्ञान है।

विद्युत—ऊर्जा जो अंधकार और प्रकाश दोनों को अपने में समाए रहती है, जो साधक को दो अतियों के पार ले जा परम बोध देने वाली है। वह विद्युत—ऊर्जा जो चमकती है प्रत्येक साधक के लिए किसी न किसी घड़ी, किसी न किसी काल में। वह शिखर—ऊर्जा जिसे उपलब्ध करने में एक युग भी लग सकता है या फिर जो एक ही पल में चमक उठती है। और जिनके पास प्रेम भरी अनंत प्रतीक्षा है उन्हें क्या फिक्र! जब भी चाहे चमके। साधना—प्रयासों के कई—कई दिनों बाद प्रयासहीन विश्राम में वह उपलब्ध हो सकती है। और कभी बिना किसी कोशिश के समग्र समर्पण की घड़ी में सद्‌गुरु की

अनुकंपा के मेघ सी भी बरस उठती है—

'अपने से जो कभी न होए

सद्‌गुरु देखे पल में होए।'

नतमस्तक हूं मुस्कान—आंसू लुटाती हूं उन्हीं श्री चरणों में, परम—दृष्टि की छाव में जिसने तंत्र—दर्शन को नए से नया बना दिया।

मा योग निरूपम

(निरुपमा सेवती)

एमए. (हिंदी), नृत्य विशारद,

एच पी.एस, एम डी ई एच

108—बी, गीतांजलि

वासवानी मार्ग, सात बंगला

वरसोवा, बंबई—4०००61

(मा योग निरुपम जो कि साहित्य जगत में निरुपमा सेवती के नाम से प्रसिद्ध हैं ओशो से एक लंबे अरसे से जुड़ी हुई हैं। सुप्रसिद्ध कथा— लेखिका 'निरुपम' के 5 कहानी— संग्रह एवं 5 उपन्यास प्रकाशित हुए हैं। इसके अलावा अन्य? 14 कहानी— संग्रहों में आपकी कहानियां संकलित की गई हैं। लेखन के साथ ही साथ निरुपम जी संगीत और नृत्य की ललित विधाओं में भी निपुण हैं।)